THE TIMES OF INDIA

Date: 05-11-25

What Doctor Ordered

Our docs, nurses are in demand globally. Why can't we fix med infra here & also become top med tourism spot?

TOI Editorials

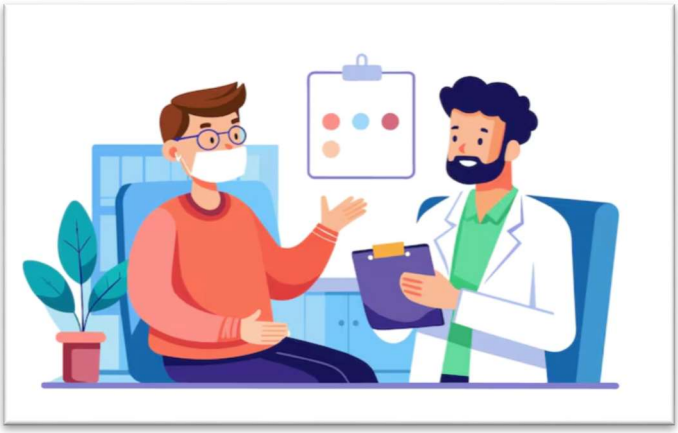

It's unsurprising yet heartening to see that India's doctors and nurses are the largest group of migrant health workers in OECD member countries. In 2020-2021, 75k doctors moved to practise in other countries as did 1.2L nurses, per data released in the International Migration Outlook 2025 report. Two points.

- First, it confirms trends since the turn of the century, and globalisation, that migration of skilled workforce is a mainstay for developed economies to address in the most obvious way the challenges of an ageing population and growing demand for healthcare. To that end, about a quarter of doctors in service in OECD nations are migrants.

- Second, protectionist anti-migration policies are not in the self-interest of countries. Nations recognise this, and are tailoring policy to recruit healthcare workers from countries like India. The OECD report points to a Belgian project that recruits and trains Indian nurses for the Flemish healthcare system, especially geriatric care. The two-year course's initial months include training in Kerala where Dutch is also taught. Such initiatives are welcome as are govt-to-govt endeavours such as recruitment agreements with England and Ireland.

Over half of Ireland's nursing workforce in 2023 was trained abroad, the country is home to a robust Indian nurses' diaspora. When this is the reality – a high global demand for Indian doctors and nurses – why is the domestic outlook so gloomy? Clearly what is taught in govt medical colleges as well as private ones not focused on profiteering alone (high capitation fees, sham merit, ghost faculty, poor infra) is holding Indians in good stead. The OECD report makes it all the more a priority that govt fix the medical colleges ecosystem – decentralising the all-India entrance exam NEET that over 2.4mn sat for last year, is just the starting point. Take the registration of doctors. Months ago, NMC reported under 1.5L doctors registered in Tamil Nadu, while the state council registered over 2L. For Delhi, NMC had fewer than 31.5k docs but the Delhi council data for 2020 had over 72,600. There are no answers to where 40k docs disappeared. Add to that the statewise skew in numbers of doctors and the massive urban-rural divide in infra and staff.

In allowing these problems to fester and at best attempting band-aid solutions, India is underutilising its potential as a top healthcare destination. Ranked 10th globally, India's medical tourism market is projected to reach $58bn by 2035 at CAGR of 12.3%. Over 6.4L medical tourist visas were issued in 2024. Yet, fragmented

care, growing distrust in private hospitals for overcharging and unnecessary procedures, and poor follow-up are marring India's many advantages.

दैनिक भास्कर

Date: 05-11-25

चीन परमाणु परीक्षण में पाक की मदद कर रहा है?

संपादकीय

ट्रम्प ने एक इंटरव्यू में कहा है कि पाक, चीन, रूस और उत्तरी कोरिया गुप्त रूप से परमाणु परीक्षण कर रहे हैं। इसमें मुद्दा यह है कि पाक को अगर चीन ऐसी मदद दे रहा है तो उसके मुकाबले भारत को क्या तैयारी करनी होगी। यह सच है कि हाल में चीन ने भारत के प्रति अपना वाणिज्यिक ही नहीं रणनीतिक रवैया भी ज्यादा दोस्ताना किया है | रेयर अर्थ देने की प्रक्रिया भी बहाल की है। उधर भारत ने ट्रम्प के दबाव के बाद रूस से तेल खरीदने में भारी कमी की है। लेकिन अगर अमेरिका ने टैरिफ 50 से घटाकर 17% नहीं किया या भारत का वाणिज्यिक हित नहीं देखा तो सोचना होगा कि रूस से फिर से तेल खरीद बहाल की जाए। कहीं यह खुलासा ट्रम्प ने इसलिए तो नहीं किया कि भारत चीन और रूस से पूरी तरह दूर हो जाए? यह संभव नहीं लगता । रेयर अर्थ की दुनिया भर की जरूरत का 70% चीन देता है। भारत तो छोड़ें, स्वयं अमेरिका भी रेयर अर्थ के लिए चीन की हर शर्त मानने को मजबूर है। ऐसे में अगर चीन भारत को बगैर किसी शर्त के रेयर अर्थ देने पर राजी है। तो हमें अपने सामरिक - वाणिज्यिक हितों को कई आयामों पर देखना होगा। रूस दशकों से हर गाढ़े वक्त पर भारत के साथ खड़ा रहा है। जबकि अमेरिका का रिकॉर्ड पाक को हमारे खिलाफ खड़ा करने और हथियार से लैस करने का देखा जा चुका है। लिहाजा चीन पाकिस्तान को किस किस्म के गुप्त परमाणु परीक्षण में मदद कर रहा है, यह देखना होगा। केवल ट्रम्प के खुलासों पर भरोसा करके भारत अपनी कूटनीति नहीं बदल सकता।

Date: 05-11-25

हमें दूसरों की आस्थाओं का सम्मान करना सीखना होगा

प्रियदर्शन

महिला विश्व कप क्रिकेट के सेमीफाइनल में ऑस्ट्रेलिया के खिलाफ मैच-विजेता पारी खेलते हुए शतक लगाने वाली भारतीय बल्लेबाज जेमिमा रोड्रिग्स से मैच के बाद पूछा गया कि वे जब थक गई थीं तो क्या महसूस कर रही थीं?

भावनाओं के ज्वार से बने आंसुओं में डूबी जेमिमा ने बहुत ईमानदार जवाब दिया कि उस समय उन्होंने बाइबिल की पंक्तियां याद कीं- "स्टैंड स्टिल एंड गॉड विल फाइट फॉर यू' (जमे रहो तो ईश्वर तुम्हारे लिए लड़ेंगे) ।

जेमिमा इस मोड़ तक बिल्कुल अपनी मेहनत से आई थी। सेमीफाइनल से पहले वाले मैच में उन्हें खेलने का मौका भी नहीं मिला था। तो टीम में उनका चयन एक इत्तेफाक भी था। लेकिन इस संयोग से मिले अवसर को उन्होंने अपने पराक्रम से एक ऐतिहासिक उपलब्धि में बदल डाला था। इसी क्रम में अपनी थकान से जूझने के लिए अगर उन्होंने अपने ईश्वर से प्रेरणा ली और यह बात बता दी तो क्या इसे खेल के बीच धर्म को लाना कहेंगे?

दरअसल धर्म का मामला बहुत दुविधा भरा होता है। धर्म और अध्यात्म में एक बहुत बारीक रेखा होती है। वैसी ही बारीक रेखा आस्था व अंधविश्वास के बीच भी होती है। शायद इससे कुछ मोटी रेखा धार्मिकता और साम्प्रदायिकता के बीच होती है। हमें पता नहीं चलता कि हम कब आध्यात्मिक होते-होते धार्मिक हो जाते हैं और आस्थावान होते-होते अंधविश्वासी हो जाते हैं। हमें यह भी पता नहीं चलता कि हम कब धार्मिक होते-होते साम्प्रदायिक भी हो उठते हैं। आज के भारत में धार्मिक पहचानें भी निशाने पर हैं- या वही शायद सबसे ज्यादा निशाने पर हैं। हर किसी को हिंदू, मुसलमान, ईसाई या सिख के रूप में पहचाना जा रहा है। यहां से वह साम्प्रदायिकता शुरू होती है, जो इन पहचानों के आधार पर राष्ट्रीयताओं या प्राथमिक नागरिकताओं का निर्माण शुरू करती है।

भारतीय क्रिकेट टीम की रिकॉर्ड जीत के मौके पर जेमिमा के वक्तव्य के साथ ही कइयों को उनकी धार्मिक पहचान याद आने लगी। इनमें वे उदारवादी लोग भी शामिल हैं, जिन्हें लगता है कि खेल और धर्म के घालमेल में रियायत किसी को नहीं मिलनी चाहिए। वे भूल जाते हैं कि यह रियायत सबसे ज्यादा वे लोग ले रहे हैं, जो बहुसंख्यकवादी दुराग्रहों के मारे हैं।

कितना सुंदर होता कि हम खेलों को न राजनीति से जोड़ते और न ही धर्म से। लेकिन वह हमने बुरी तरह जोड़ रखा है। खेल- खासकर क्रिकेट हमारे राष्ट्रवादी उबाल के लिए अफीम का काम करने लगा है। इस राष्ट्रवाद की जो नई व्याख्या धार्मिक और जातिगत पहचान के आधार पर शुरू हो गई है, उसमें कभी जेमिमा रोड्रिग्स की ईसाइयत को प्रश्नांकित किया जा सकता है तो कभी सूर्य कुमार यादव की ओबीसी पहचान का परचम फहराया जा सकता है। टीम में धार्मिक पहचान के आधार पर खिलाड़ियों के चयन का आरोप तो बीते दिनों लगाया ही जा चुका है।

जबकि दुनिया भर में खिलाड़ी अपनी आस्था का सार्वजनिक प्रदर्शन करते रहे हैं। फुटबॉलर लियोनल मेस्सी ने 2022 का फुटबॉल विश्व कप जीतने के बाद इसे ईश्वर का तोहफा बताया था। वे कई बार गोल करने के बाद क्रॉस का चिह्न बनाते देखे जा सकते हैं।

लेकिन कोई मेस्सी से नहीं कहता कि वे अपनी जीत में ईश्वर को क्यों शामिल कर रहे हैं। पुट्टपर्थी के सांईबाबा के प्रति सचिन तेंदुलकर की आस्था जगजाहिर है- कोई उनसे प्रतिप्रश्न नहीं करता। लेकिन जेमिमा जब पिच पर खड़े रहने की ताकत जीसस क्राइस्ट से हासिल करती हैं, तो इस पर सवाल पूछे जाने लगते हैं।

क्योंकि हम आस्था को संदेह से देखते हैं, और अंधविश्वास पर भरोसा करते हैं। जिस देश में धर्म राजनीति की नियामक शक्तियों में एक हो, जहां अल्पसंख्यक पहचानों के खिलाफ सार्वजनिक माहौल बनाया जा रहा हो, वहां एक जेमिमा क्या अपनी ईसाई आस्था का प्रदर्शन कर सुरक्षित रह सकती हैं? हम इस मामले में अचानक तर्कवादी क्यों हो उठते हैं?

इस सवाल में हम सबका इम्तिहान है- हमारी भारतीयता का भी।

बिज़नेस स्टैंडर्ड

Date: 05-11-25

सेवा क्षेत्र में असंगठित उपक्रमों का जाल

आर कविता राव, (लेखिका राष्ट्रीय लोक वित्त और नीति संस्थान, नई दिल्ली की निदेशक हैं)

देश में सेवा क्षेत्र के रोजगार संबंधी रुझानों पर नीति आयोग की एक हालिया रिपोर्ट ने देश के सकल घरेलू उत्पाद (जीडीपी) में सबसे अधिक हिस्सेदारी रखने वाले इस क्षेत्र में रोजगार के हालात को एक बार फिर प्रकाश में ला दिया है। रिपोर्ट देश में रोजगार तैयार करने में सेवा क्षेत्र की भूमिका को रेखांकित करते हुए बताती है कि देश के कुल रोजगार में इसकी हिस्सेदारी 2011-12 के 26.9 फीसदी से बढ़कर 2023-24 में 29.7 फीसदी हो गई।

यह सात पहलुओं पर रोजगार के परिदृश्य का परीक्षण करता है: स्थानिक वितरण, लैंगिक यानी स्त्री-पुरुष भागीदारी, रोजगार का प्रकार, आयु, शिक्षा, अनौपचारिकता और आय। ये सभी प्रोफाइल ढांचागत चुनौतियों की पहचान के लिए प्रयोग की जाती हैं। अर्थव्यवस्था में उत्पादक और लाभकारी रोजगार को बढ़ाने की चुनौती से निपटने के लिए रिपोर्ट में नीतिगत विकल्पों की एक सूची भी प्रस्तुत की गई है। इस आलेख में हम इन प्रोफाइल में से एक यानी औपचारिक बनाम अनौपचारिक रोजगार के प्रभावों की पड़ताल करेंगे।

सबसे पहले ध्यान देते हैं रिपोर्ट में विभिन्न क्षेत्रों के लिए रोजगार के कोविड के पहले और बाद मौजूद रोजगार की प्रत्यास्थता (इलैस्टिसिटी) की तुलना पर। कोविड के बाद कृषि, विनिर्माण और सेवा क्षेत्र तीनों में रोजगार की प्रत्यास्थता बढ़ी। सेवा क्षेत्र की बात करें तो उसकी प्रत्यास्थता 0.35 से बढ़कर 0.63 हो गई। यह सुखद है लेकिन चूंकि प्रत्यास्थता 1 से कम है इसलिए संकेत मिलता है कि उत्पादन वृद्धि और मूल्यवर्धन रोजगार में उल्लेखनीय वृद्धि के रूप में सामने नहीं आया।

दूसरी ओर कृषि और विनिर्माण की प्रत्यास्थता 1 से अधिक है। इसमें इजाफे की वजह कोविड-19 महामारी के बाद आर्थिक गतिविधियों में लगा झटका भी हो सकता है और एक बार अर्थव्यवस्था में स्थिरता आने के बाद इसमें कमी आई होगी। परंतु कृषि में उच्च प्रत्यास्थता चिंतित करने वाली हो सकती है क्योंकि यह समग्र रोजगार अवसरों के लिहाज से कमजोर है। ऐसे में उत्पादक रोजगार बढ़ाने की आवश्यकता है।

सेवा क्षेत्र में रोजगार की औपचारिक-अनौपचारिक प्रोफाइल की बात करें तो, रिपोर्ट के अनुसार 51 फीसदी नौकरियां नियमित वेतन वाली हैं जबकि 45 फीसदी लोग स्वरोजगार में लगे हुए हैं। व्यापार और परिवहन क्षेत्रों में स्वरोजगार का अनुपात और भी अधिक है। यदि हम अनौपचारिक नौकरियों को उन नियमित वेतन वाली नौकरियों के रूप में परिभाषित करें जिनमें सामाजिक सुरक्षा लाभ नहीं मिलते, तो सेवा क्षेत्र में अनौपचारिक नौकरियों की संख्या बढ़कर 69 फीसदी हो जाती है। असंगठित क्षेत्र की वार्षिक सर्वेक्षण रिपोर्ट दर्शाती है कि सेवा क्षेत्र में मालिकों द्वारा संचालित और परिवारों द्वारा संचालित इकाइयों का प्रभुत्व है। ये कुल उद्यमों का 82.5 फीसदी हिस्सा हैं।

इस संदर्भ में रिपोर्ट में जो प्राथमिकताएं तय की गई हैं उनमें से एक है 'औपचारिकीकरण का समाधान और रोजगार की सुरक्षा।' यह सराहनीय लक्ष्य है। इस लक्ष्य की दिशा में नीतिगत सुझाव अधिक बेहतर नियमन और सामाजिक सुरक्षा तक पहुंच पर ध्यान देते हैं। दो सवालों के जवाब हासिल करने जरूरी है: औपचारिकीकरण की राह में क्या बाधाएं हैं और औपचारिक क्षेत्र के रोजगार पर आर्टिफिशल इंटेलिजेंस का क्या असर हो सकता है?

औपचारिकीकरण की बाधाएं

असंगठित क्षेत्र के रोजगार में दो घटक होते हैं। असंगठित उपक्रम और ऐसे औपचारिक उपक्रम जो बिना सामाजिक सुरक्षा के रोजगार प्रदान करते हैं। औपचारिक रोजगार के क्षेत्र की बाधाएं असंगठित क्षेत्र की दोनों श्रेणियों से अलग हो सकती हैं। असंगठित उपक्रमों के लिए औपचारिकीकरण की एक कीमत चुकानी होती है। विभिन्न नियमन और करों का अनुपालन, वह भी बिना प्रत्यक्ष लाभ के। श्रम की लागत या प्रयास के प्रतिफल पर भी असर पड़ेगा, जिससे उपक्रम की व्यवहार्यता प्रभावित हो सकती है। दूसरी ओर, कम कौशल वाले श्रमिकों के एक अतिरिक्त भंडार की उपलब्धता यह भी दर्शाती है कि कार्यबल की सौदेबाजी की शक्ति सीमित है। इसलिए, श्रम बाजार में मांग और आपूर्ति दोनों पक्षों के लिए यथा स्थिति को बदलने को लेकर कोई विशेष प्रोत्साहन नहीं है।

इस संदर्भ में क्या हम औपचारिकीकरण को अर्थव्यवस्था में मांग के पैमाने से जोड़ कर देख सकते हैं? मांग में तेज विस्तार से ऐसे हालात बन सकते हैं जहां औपचारिकीकरण को वांछित और व्यावहारिक दोनों माना जाए। आय हस्तांतरण जो आय वितरण के सबसे निचले कुछ वर्गों की मांग को बढ़ाते हैं, प्रभावी हो सकते हैं। सरकारें यदि इन आय हस्तांतरणों को महिलाओं के लिए लागू कर रही हैं, तो संभवतः वे इस विशिष्ट आवश्यकता को संबोधित कर रही हैं।

वहीं दूसरी ओर, संगठित क्षेत्र के उपक्रमों के लिए कर्मचारियों को सामाजिक सुरक्षा कवरेज प्रदान करना दीर्घकालिक लागतों को बढ़ा सकता है, जिससे अनिश्चित आर्थिक माहौल में आकस्मिक परिस्थितियों से निपटने में उनका लचीलापन सीमित हो सकता है। पिछले तीन दशकों में सरकारों और संस्थानों ने ऐसी लागतों को कम करने के लिए सफाई, सुरक्षा और परिवहन सेवाओं को आउटसोर्स करने का विकल्प चुना है।

इस चिंता को दूर करने के लिए, क्या हम सामाजिक सुरक्षा को सरकार द्वारा प्रदान की जाने वाली सेवा के रूप में देख सकते हैं? केंद्र सरकार ने इस दिशा में कुछ योजनाएं शुरू की हैं। इन योजनाओं के तहत दी जाने वाली सुरक्षा या बीमा के स्तर को बढ़ाना, ताकि न्यूनतम जीवन गुणवत्ता सुनिश्चित की जा सके और आवश्यकता के समय इस सुरक्षा तक आसान पहुंच का प्रमाण प्रस्तुत करना, ये उपाय श्रमिकों को इसे अपनाने के लिए प्रेरित कर सकते हैं और नियोक्ताओं पर अतिरिक्त लागत बोझ भी नहीं आता। एक प्रश्न फिर भी बना रहता है। वह यह कि इस प्रकार के बड़े पैमाने पर

कार्यक्रमों के लिए वित्तीय संसाधन कैसे जुटाए जाएं? आयकर व्यवस्था को अधिक व्यापक आधार के साथ तर्कसंगत बनाना एक तरीका हो सकता है।

दूसरे सवाल की बात करें तो एआई रोजगार पर बहुत बड़ा असर डाल सकता है। नीति आयोग की रिपोर्ट में इंटरनैशनल जर्नल ऑफ इनोवेटिव रिसर्च इन टेक्नॉलजी में प्रकाशित ए कुमार के अध्ययन का हवाला दिया गया है। इस अध्ययन में संकेत दिया गया है कि 40-50 फीसदी दफ्तरी नौकरियां समाप्त हो सकती हैं। तर्क दिया गया है कि एआई और डेटा विशेषज्ञों की मांग बढ़ेगी लेकिन अपनी प्रकृति के कारण यह तकनीक कम लोगों की आवश्यकता वाली है। इससे कुल मिलाकर रोजगार पर बुरा असर होगा।

यह चिंता का विषय है क्योंकि औपचारिक क्षेत्र में बड़ी संख्या में नौकरियां आईटी और फिनटेक क्षेत्र से संबंधित हैं। आर्टिफिशल इंटेलिजेंस को अपनाने से कुछ उच्च वेतन वाली नौकरियां तैयार हो सकती हैं लेकिन अब वक्त आ गया है कि जहां संभव हो वहां नए सिरे से कौशल विकास और उन्नत कौशल पर ध्यान दिया जाए ताकि इन अवसरों का लाभ उठाया जा सके।

अल्पकालिक रूप में अधिक लोगों के अनौपचारिक क्षेत्र की ओर मुड़ने का जोखिम है। इस क्षेत्र को प्रोत्साहित करने की आवश्यकता है ताकि औपचारिकीकरण को बढ़ावा दिया जा सके और लचीले व टिकाऊ रोजगार सृजन को बढ़ावा मिल सके।

Date: 05-11-25

राष्ट्र निर्माण में अनुसंधान प्रयोगशालाएं क्यों है अहम

जयंत सिन्हा, (लेखक केंद्रीय मंत्री और लोक सभा सदस्य रह चुके हैं।)

किसी भी देश की लंबे समय तक चलने वाली समृद्धि और मजबूती का रहस्य क्या है, इसके बारे में नोबेल अर्थशास्त्र पुरस्कार समिति लगातार बताती रही है। जोएल मोकिर, फिलिप एगियों और पीटर हॉविट को यह बताने के लिए पुरस्कृत किया गया कि कैसे संस्कृति, संस्थान और 'रचनात्मक विध्वंस' यानी, पुराने और कम कुशल तरीकों को नए और बेहतर विचारों से लगातार बदलना, हमेशा नए आविष्कारों को उत्पादकता में बदलते रहते हैं।

यदि इन पुरस्कारों को एक साथ देखा जाए तो ये एक नीतिगत पुस्तिका प्रतीत होते हैं। देश तभी समृद्ध और मजबूत बनते हैं जब वे ऐसी संस्थाएं बनाते हैं जो नए- नए विचारों का सृजन करें और उन्हें तेजी से बड़े पैमाने पर लागू करें साथ ही साथ अपने प्राकृतिक

संसाधनों को भी संरक्षित रखें। अगर इस संदर्भ में भारतीय संस्करण की बात करें तो यह 'ग्रीन फ्रंटियर' यानी टिकाऊ आर्थिक विकास मॉडल हो सकता है जिसका लक्ष्य ऐसी वृद्धि करना जो वैश्विक प्रतिस्पर्धा को बनाए रखने के साथ-साथ स्थिरता को भी साथ लेकर चले । भारत के लिए, इसका मतलब है कि हमें तकनीकी संस्थाओं का निर्माण करने की आवश्यकता है जो स्थायी समृद्धि के इंजन बनें। देशों ने कॉरपोरेट अनुसंधान प्रयोगशालाओं को एक प्रमुख चालक के रूप में रखते हुए शक्तिशाली नवाचार तंत्र का निर्माण कर इसे हासिल किया है।

इन कॉरपोरेट प्रयोगशालाओं को धैर्य के साथ टिकी रहने वाली पूंजी के साथ बनाए रखा गया है और उनके नवाचारों को तेजी से बढ़ाया गया है। इस लिहाज से बेल लैब्स एक मानक बनी हुई है क्योंकि इसने मौलिक सिद्धांतों को इंजीनियरिंग के साथ जोड़ा और इसके नतीजे अर्थव्यवस्था में दिखे। बेल लैब्स के आविष्कारों में ट्रांजिस्टर, सूचना सिद्धांत, लेजर, सीसीडी (चार्ज कपल्ड डिवाइस), यूनिक्स और सी शामिल हैं, जिसने 10 नोबेल और पांच ट्यूरिंग पुरस्कार र हासिल किए। गौर करने वाली बात यह है कि आर्टिफिशल इंटेलिजेंस (एआई) की तकनीकी सफलता गूगल की एआई अनुसंधान प्रयोगशाला, गूगल ब्रेन के आठ शोधकर्ताओं द्वारा लिखे गए एक ही शोध पत्र से मिली थी।

जर्मनी के फ्राउनहोफर इंस्टीट्यूट सरकारी अनुदान और अनुबंध राजस्व के आधार पर चलते हैं ताकि इन लैब्स को पूंजी की कमी न हो और इनमें नए विचारों की तेजी बनी रहे। वहीं जापान शोध से लेकर इसके प्रदर्शन और इसे लागू करने तक के पूरे चक्र के लिए फंडिंग करता है जिसके कारण यहां दशक भर के लिए दांव लगाया जाता है और समय-समय पर यह भी देखा जाता है कि यह अपने लक्ष्यों को हासिल करने की दिशा में आगे बढ़ रहे हैं या नहीं। चीन ने यह सबक लिया है। कि जब कंपनियां आपस में कड़ी प्रतिस्पर्द्धा करती हैं तब वे शोध एवं विकास (आरएंडडी) में आगे बढ़ सकती हैं। इससे कंपनियां नए उत्पादों को बनाने की मशीन बन जाती हैं। सबसे जरूरी बात यह है कि लगातार फंडिंग होती रहनी चाहिए ताकि लैब्स में समय के साथ सीखने का काम बढ़ता रहे। हमारे बड़े व्यापारिक घरानों को इस चुनौती का सामना करना चाहिए। वे आपूर्ति श्रृंखलाओं को नियंत्रित करते हैं, उनके पास अपार वित्तीय संसाधन और ग्राहकों तक शानदार पहुंच है। नतीजतन, वे किसी भी मंत्रालय या विश्वविद्यालय की तुलना में विचारों का प्रसार कारखानों, ग्रिडों और डेटा केंद्रों तक तेजी से कर सकते हैं।

प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी की सरकार ने नीतिगत ढांचा प्रदान किया है। अनुसंधान राष्ट्रीय शोध फाउंडेशन (एएनआरएफ) को रणनीति और उद्योग- विश्वविद्यालय सहयोग को आधार देने के लिए बनाया गया है। अनुसंधान, विकास और नवाचार योजना अपनी तरह के पहले निवेशों को जोखिम से बचाने के लिए लंबी अवधि की कम लागत वाली पूंजी देती है। इस क्षेत्र से जुड़े अभियान जैसे कि इंडियाए आई, प्रोग्राम संबंधी चैनल जोड़ते हैं। वैज्ञानिक और औद्योगिक अनुसंधान विभाग (डीएसआईआर) की मान्यता और धारा 35 की कटौती घरेलू शोध एवं विकास की प्रभावी लागत को कम करती है।

कई नई तकनीकों में महारत हासिल करने की जरूरत है। उदाहरण के तौर पर आर्टिफिशल इंटेलिजेंस (एआई) में, हम अपने डिजिटल सार्वजनिक बुनियादी ढांचे को जनसंख्या पर आधारित पैमाने के परीक्षण मंच के रूप में उपयोग कर सकते हैं, लेकिन प्रयोगशालाओं को मूल्यांकन, सुरक्षा साधन चेन और डोमेन मॉडल पर ध्यान केंद्रित करना चाहिए जिन्हें सरकारें और उद्यम वास्तव में खरीद सकते हैं। सेमीकंडक्टर में, हमें मोबिलिटी और ग्रिड से जुड़े आधुनिक पैकेजिंग, पावर इलेक्ट्रॉनिक्स और विशेष नोड्स पर ध्यान देना चाहिए। साथ ही, भारतीय बौद्धिक संपदा को ऐसे घटकों में बदलना चाहिए जिन्हें दुनिया भर में भेजा जा सके। क्वांटम कंप्यूटिंग में हमें सबसे पहले कम समय में होने वाली सेंसिंग और

सुरक्षित संचार पर ध्यान देना चाहिए। इसके साथ ही, कंप्यूटिंग के लिए त्रुटि निवारक और हार्डवेयर क्षमता बनानी चाहिए।

हरित ऊर्जा में, हमें बैटरी के बेहतर रसायन और पावर इलेक्ट्रॉनिक्स में प्रगति के लिए जोर देना चाहिए। साथ ही छोटे मॉड्यूलर नाभिकीय रिएक्टर बनाने पर जोर देना चाहिए ताकि डेटा सेंटर और बिजली से चलने वाले उद्योग को स्वच्छ ऊर्जा मिल सके। अंतरिक्ष में, हमें सिर्फ अभियानों पर ध्यान नहीं देना चाहिए बल्कि बाजार पर भी ध्यान देना होगा। हमें ऐसी तकनीक बनानी होगी जिससे उपग्रह से मिली जानकारी का इस्तेमाल करके कृषि क्षेत्रों, शहरों और समुद्री इलाकों के लिए सही फैसले लिए जा सकें। जीवन विज्ञान में, ऐसे डेटा प्लेटफॉर्म बना सकते हैं जो लोगों की जानकारी को गोपनीय रखे। फिर इन मंचों को विनिर्माण, तीव्र परीक्षण नेटवर्क और चिकित्सा में उपयोगी एआई के साथ जोड़ सकते हैं जिससे कोई भी खोज तुरंत लोगों के काम आ सके।

कंपनियों को प्रतिभाशाली लोगों को आकर्षित करने और ऐसे लोगों की खेप तैयार करने की आवश्यकता है जो हमारी अनुसंधान प्रयोगशालाओं को ताकत देंगे। हमें शोधकर्ताओं को वैश्विक वेतन का भुगतान करने, उन्हें कॉरपोरेट सलाहकारों के साथ जोड़ने और लैब तक पहुंच की गारंटी देने की आवश्यकता है। एएनआरएफ की मदद से प्रोफेसरों की नियुक्तियां और विदेशों से लौटे प्रोफेसरों को जोड़ना चाहिए, ताकि वे नेतृत्वकर्ता की भूमिका में आ सकें। लैब को चलाने वाले लोगों (जैसे तकनीशियन, मैट्रोलॉजी विशेषज्ञ, जैव सुरक्षा प्रबंधकों) को बेहतर प्रशिक्षण देकर और उनके वेतन को बढ़ाकर उनके काम को पेशेवर बनाना चाहिए। हमें इन लोगों को योग्यता के अनुसार करियर में आगे बढ़ने का मौका देना चाहिए, ताकि वे कॉरपोरेट शोध लैब में अपना बेहतरीन काम कर सकें।

सवाल यह है कि अब बड़े कारोबारी समूहों को क्या करना चाहिए? अलग-अलग क्षेत्र के लिए शोध एवं विकास के लक्ष्य तय करते हुए 10 साल के लिए लैब बनाएं, ताकि नेतृत्वकर्ता के बदलने पर भी काम चलता रहे। दूसरा स्वतंत्र लैब प्रशासन तैयार करें: यानी ईमानदार और काबिल लोगों को नेतृत्वकर्ता बनाएं। ऐसे विशेषज्ञ रखें जो लंबे समय तक काम कर सकें और यह देखते रहें कि काम सही चल रहा है या नहीं । विश्वविद्यालय और स्टार्टअप के साथ बौद्धिक संपदा को साझा करने के नियम बनाएं। तीसरा, पहला खरीदार खुद बनेः अपने लैब से बनने वाले नए उत्पाद को सबसे पहले खुद खरीदें और इसे खर्च न समझें, बल्कि भविष्य के बीमा की तरह देखें। चौथा, जैसे आप अपनी कंपनी के बारे में जानकारी देते हैं, वैसे ही शोध के बारे में भी बताएं। शेयर बाजार में इस पारदर्शिता को सराहा जाएगा। सरकार का काम है एक स्थिर नीति बनाए रखना और स्वदेशी तकनीक खरीदना। जब सरकार पहली खेप खरीदती है तब कंपनियां दूसरी खेप में निवेश करती हैं। इस तरह नोबेल की कहानी भारत की कहानी भी बन सकती है। एक दशक बाद, हमारा सवाल यह नहीं होना चाहिए कि क्या भारत बेल जैसी लैब बना सकता है। सवाल यह होना चाहिए कि कौन सी कॉरपोरेट लैब एआई, चिप, क्वांटम ग्रीन एनर्जी, अंतरिक्ष और लाइफ साइंसेज में हमारे लाभ को आधार बनाती है और उनके विचार कितनी जल्दी कारखानों, डेटा केंद्रों, उपग्रहों, अस्पतालों और कृषि क्षेत्रों में स्थापित हो जाते हैं। इसी तरह तकनीक एक टिकाऊ वृद्धि इंजन बन सकती है और भारत टिकाऊ आर्थिक विकास में अपना झंडा गाड़ सकता है।

धोखाधडी का संजाल

संपादकीय

पिछले कुछ समय से साइबर अपराधियों का संजाल जिस तरह लगातार बढ़ता देखा जा रहा है, उसमें डिजिटल हो रही व्यवस्था के सामने एक बड़ी चुनौती खड़ी हो गई है। इससे निपटने के लिए सरकार और जांच एजेंसियों के मौजूदा सुरक्षात्मक उपाय बौने साबित हो रहे हैं। साइबर अपराधी ठगी की घटनाओं को अंजाम देने के लिए नए-नए तरीके इजाद कर रहे हैं। 'डिजिटल अरेस्ट' भी इनमें से एक है, जिसके जरिए बड़े पैमाने पर लोगों को धोखाधड़ी का शिकार बनाया जा रहा है। इसका अंदाजा इसी बात से लगाया जा सकता है। कि केंद्र सरकार और केंद्रीय जांच जांच ब्यूरो (सीबीआई) ने ऐसे मामलों में अब तक तीन हजार करोड़ रुपए से अधिक की उगाही किए जाने का अनुमान जताया है। यही कारण है। कि अब सर्वोच्च अदालत ने इस तरह के मामलों से सख्ती से निपटने की जरूरत पर बल दिया है। साथ ही कहा कि अगर अदालत से कड़े आदेश पारित नहीं किए गए, तो यह समस्या और भी गंभीर हो सकती है।

गौरतलब है कि देश में साइबर अपराधों के मामलों में तेजी से बढ़ोतरी का आकलन राष्ट्रीय अपराध रेकार्ड ब्यूरो की हाल की एक रपट से किया जा सकता है। इसमें कहा गया है कि वर्ष 2022 में देश भर में साइबर अपराध के 65,983 मामले दर्ज किए गए, जिनकी संख्या 2023 में इकतीस फीसद बढ़कर 86,420 हो गई। साइबर ठगी के ऐसे मामले भी सामने आते रहे हैं, जिनमें पीड़ित लोगों से करोड़ों रुपए ऐंठ लिए गए। ऐसे ही एक मामले में पिछले दिनों हरियाणा के अंबाला की एक बुजुर्ग महिला ने प्रधान न्यायाधीश को पत्र लिखकर कहा कि उन्हें और उनके पति को 'डिजिटल अरेस्ट' कर अपराधियों ने उनसे एक करोड़ रुपए से अधिक की रकम हड़प ली। इसके बाद शीर्ष अदालत ने ऐसे मामलों को लेकर सख्त रुख अपनाया है। सर्वोच्च न्यायालय के इस दखल से उम्मीद है कि सरकार और जांच एजंसियों की ओर से साइबर ठगों पर नकेल कसने के लिए जल्द ठोस एवं कारगर कदम उठाए जाएंगे। साइबर संजाल की दुनिया में जिस रफ्तार से जोखिम पैदा हो रहे हैं, उसमें व्यापक पैमाने पर डिजिटलीकरण के असुरक्षित होने को लेकर भी गंभीर सवाल उठने लगे हैं।

Live हिन्दुस्तान .com

Date: 05-11-25

परमाणु परिदृश्य में बड़ा परिवर्तन

मोहन भंडारी (लेफ्टिनेंट जनरल (रिटायर्ड))

अमेरिकी राष्ट्रपति डोनाल्ड ट्रंप के परमाणु परीक्षण संबंधी ताजा दावे शोचनीय तो हैं, मगर आश्चर्यजनक नहीं। | उन्होंने कहा है कि पाकिस्तान, चीन और रूस भूमिगत परमाणु परीक्षण कर रहे हैं। निस्संदेह, ऐसे बयान तर्कों की कसौटी पर

कसे जाएंगे, खासतौर से तब, जब अमेरिकी राष्ट्रपति अपने बड़बोलेपन के लिए जाने जाते हों मगर सच यह भी है कि बीते कुछ वर्षों में वैश्विक परमाणु परिदृश्य बदल गया है।

एक वक्त था, जब चीन, अमेरिका सहित कई देश व्यापक परमाणु परीक्षण प्रतिबंध संधि (सीटीबीटी) पर मौखिक समर्थन जता रहे थे, लेकिन आज बीजिंग ने परोक्षरूप से यही चेतावनी दी है कि यदि ताइवानमसले पर उसे मात मिलती है, तो वह परमाणु विकल्पों के इस्तेमाल से भी गुरेज नहीं करेगा। गौरतलब है, पहले वह भारत की तरह ही परमाणु हथियारों का पहले इस्तेमाल न करने की बातें करता था। इसी तरह, अमेरिका की मुख्य भूमि अबउत्तर कोरिया से होनेवाले हमले की जद में है, तो रूस ने भी पिछले दिनों परमाणु संचालित क्रूज मिसाइल 'बुरेवेस्तनिक' का परीक्षण करके अपनी मंशा स्पष्ट कर दी है। कहा तो यह भी जा रहा है कि अगर रूस, चीन और उत्तर कोरिया इसी गति से आगे बढ़ते रहे, तो 2027-28 तक उनके कुल परमाणु हथियार अमेरिका से दोगुने हो जाएंगे। मुमकिन है कि इन्हीं सब वजहों से ट्रंप ने पिछले दिनों खुद भी परमाणु परीक्षण शुरू करने का एलान किया है।

यह पूरा घटनाक्रम भू-राजनीति के एक महत्वपूर्ण पहलू को बेपरदा कर रहा है। तर्क दिए जा रहे हैं कि परमाणु क्षमता वैश्विक ताकत को फिर से प्रभावित करने लगी है। हालांकि, मैं इससे पूरी तरह से सहमत नहीं हूं। क्यों? इसके लिए दूसरे विश्व युद्ध को याद करना जरूरी है। दरअसल, उस युद्ध की समाप्ति के बाद दो बातें हुईं। पहली, मित्र राष्ट्र कमजोर पड़ गए और दूसरी अमेरिकी डॉलर का दबदबा बन गया। उस समय अमेरिका का वर्चस्व स्थापित हुआ, क्योंकि नागासाकी और हिरोशिमा में परमाणु बम गिराने के बाद जापान घुटने टेक चुका था। हालांकि, बाद के वर्षों में रूस (पहले सोवियत संघ) एक अन्य महाशक्ति के रूप में उभरा और दुनिया दो ध्रुवों में बंट गई। भू-राजनीतिक समीकरण में उत्तरोत्तर आए बदलावों के कारण अमेरिका का वर्चस्व घटने लगा और अमेरिकी राष्ट्रपति एक हताश मुखिया जैसा व्यवहार करने लगे।

अभी राष्ट्रपति ट्रंप की मुख्य चिंता चीन और रूस हैं, क्योंकि ये दोनों देश अमेरिका के समकक्ष खड़े हैं। चीन की अर्थव्यवस्था तो इतनी मजबूत है कि वह हर हाल में अमेरिका को टक्कर दे रही है। यही वजह है कि व्हाइट हाउस ने अपनी प्रशांत नीति को बदला है और अपना ध्यान ताइवान पर केंद्रित किया है, जिसकी प्रतिक्रिया में चीन ने परमाणु विकल्पों के इस्तेमाल की बात कही है।

दरअसल, मौजूदा भू-राजनीतिक परिदृश्य में हर राष्ट्र दूसरे से ऊपर उठना चाहता है और हर ताकतवार मुल्क दूसरे को कमजोर बनाना चाहता है। इसके लिए वह तमाम तरह के तिकड़म आजमाता है। अमेरिकी नीति में भी इसकी स्पष्ट झलक मिलती है। उसने रूस को उलझाने के लिए यूक्रेन को शह दिया। नतीजतन, जिस युद्ध के चंद दिनों में खत्म होने की भविष्यवाणी की जा रही थी, वह तीन साल पूरे कर चुका है। अबतो इसमें यूरोपीय संघ और ब्रिटेन भी शामिल हो चुके हैं। जाहिर है, राष्ट्रीय हितों का यह टकराव है, जबकि वैश्विक व्यवस्था में कोई भी देश न तो स्थायी दुश्मन होता और न स्थायी दोस्त ।

परमाणु हथियारों को लेकर बड़े देशों का जो रवैया उसकी एक झलक स्टॉकहोम अंतरराष्ट्रीय शांति अनुसंधान संस्थान (एसआईपीआरआई) की 2025 की रिपोर्ट में दिखती है। इस रिपोर्ट के मुताबिक, कुलनी देशों के पास परमाणु हथियार हैं, जिनमें सबसे अधिक 5,459 रूस के पास हैं। दूसरे स्थान पर अमेरिका है, जिसके पास 5,177 परमाणु हथियार हैं। इसके बाद चीन का स्थान आता है, लेकिन उसके और अमेरिका के परमाणु हथियारों की संख्या में भारी अंतर है। उसके पास

बमुश्किल 600 हथियार हैं। इसके बाद फ्रांस (290), ब्रिटेन (225), भारत (180) पाकिस्तान (170) इजरायल (90) और फिर उत्तर कोरिया (50) का स्थान है। इस तरह, अभी पूरी दुनिया में 12,241 परमाणु हथियार हैं।

इसमें बहुत ज्यादा बदलाव की उम्मीद मैं नहीं देखता, क्योंकि परमाणु बम महज खौफ पैदा करने के लिए इस्तेमाल किए जाते हैं। तनाव की चरम स्थिति में विरोधी देशों पर दबाव बनाने के लिए बेशक इसके उपयोग की धमकी दी जाएगी, लेकिन शायद ही किसी परमाणु युद्ध के हम गवाह बनेंगे। ऐसा इसलिए, क्योंकि किसी मुल्क की ताकत उसकी परमाणु क्षमता से नहीं, बल्कि अर्थव्यवस्था से तय हो रही है और जंगया मौजूदा उथल-पुथल की वजह भी आर्थिक संसाधन ही हैं।

यह सही है कि दूसरे विश्व युद्ध में अगर परमाणु बम का इस्तेमाल न किया गया होता, तो जापान आत्म- समर्पण नहीं करता। मगर उसमें हुई तबाही को देखकर तमाम राष्ट्रों ने इसके इस्तेमाल से परहेज ही किया है। भारत और पाकिस्तान के संदर्भ में ही देखें, तो कारगिल जैसे युद्ध में भी परमाणु ताकत होने के बावजूद दोनों ने इससे दूरी ही बरती। हाल-फिलहाल में हुए 'ऑपरेशन सिंदूर' में भी कथित तौर पर किराना हिल्स पर किए गए भारत के हमले के बाद भी शांति बनी रही।

यहां साल 1963 की उस संधि को भी याद करना चाहिए, जिसके तहत हवा, अंतरिक्ष व जल में परमाणु हथियारों के परीक्षण पर प्रतिबंध लगा दिया गया था। साल 1996 का सीटीबीटी समझौता तो इसी की अगली कड़ी है, जिसमें सभी तरह के परमाणु परीक्षणों पर प्रतिबंध लगा दिया गया है।

सवाल है कि मौजूदा सूरतेहाल में क्या हमें भी अपनी परमाणु नीति पर विचार करना चाहिए, विशेषकर चीन और पाकिस्तान के अप्रत्याशित रवैये को देखकर ? निस्संदेह, अपनी नीति पर हमें चिंतन करना चाहिए, लेकिन यह भी ध्यान रखना चाहिए कि समरथको नही दोष गोसाईं । यह सामर्थ्य सिर्फ अपनी अर्थव्यवस्था को मजबूत बनाकर ही हासिल किया जा सकता है। हालांकि, हथियारों पर आत्मनिर्भरता एक जरूरी पहल है। रूस और अमेरिका पर निर्भरता का खामियाजा हम पूर्व में भुगत चुके हैं, लिहाजा यह आवश्यक था कि हम अपने हथियार खुद बनाएं। सुखद बात है कि पिछले कुछ समय से इस दिशा में जरूरी सक्रियता दिखाई गई है और अबहम न सिर्फ कई हथियार खुद बनाने लगे हैं, बल्कि निर्यात भी करने लगे हैं।